(A High Impact Factor, Quarterly, Peer Reviewed, Referred & Indexed Journal)
NAVJYOT / Vol. XIV / Issue – I ISSN 2277-8063

स्त्री विमर्श: हिंदी साहित्य में महिलाओं का चित्रण

हणमंत परगोंडा कांबळे शोधछात्र शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर ईमेल- kamblehp4@gmail.com

---

शोध सार:

हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में उभरा है, जिसने महिलाओं के अधिकारों, संघर्षों, और अस्मिता को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। यह विमर्श समाज में महिलाओं की स्थिति को समझने, सुधारने और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए एक सशक्त मंच के रूप में कार्य करता है। आदिकाल से लेकर आधुनिक युग तक, हिंदी साहित्य में स्त्रियों का चित्रण समय-समय पर बदलता रहा है, जो समाज की बदलती मानसिकता और सांस्कृतिक मान्यताओं का प्रतीक है। आदिकाल में स्त्रियों को मुख्यतः प्रेरणा और सौंदर्य का प्रतीक माना गया, जहाँ उन्हें वीर पत्नियों और प्रेमिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया। भक्ति काल में महिलाओं का चित्रण आध्यात्मिकता और भक्ति के संदर्भ में हुआ, जिसमें वे समाजिक बंधनों को तोड़ती हुई ईश्वर प्रेम में लीन दिखाई गई। रीतिकाव्य में महिलाओं को अधिकतर सौंदर्य और शृंगार के रूप में प्रस्तुत किया गया, जहां स्त्री देह का वर्णन अधिक था।

आधुनिक हिंदी साहित्य में, विशेष रूप से प्रेमचंद और महादेवी वर्मा जैसे लेखकों द्वारा, स्त्रियों के जीवन के वास्तविक संघर्षों को सामने लाया गया। प्रेमचंद ने अपनी कृतियों जैसे गोदान और निर्मला में स्त्रियों के सामाजिक, पारिवारिक और मानसिक संघर्षों को केंद्र में रखा। इसके बाद, स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं के योगदान और उनके संघर्षों को साहित्य में प्रमुखता दी गई, जैसे सुभद्राकुमारी चौहान की झाँसी की रानी में स्त्री शक्ति और बलिदान का चित्रण है।

आजकल, हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श केवल स्त्रियों के अधिकारों की बात नहीं करता, बल्कि यह समाज में समानता, न्याय और स्वतंत्रता की दिशा में एक सशक्त बदलाव का वाहक बन चुका है। नारीवादी आंदोलन और साहित्य ने महिलाओं को उनकी पहचान, आत्मनिर्भरता और यौनिकता पर खुलकर चर्चा करने का मंच दिया है, जिससे उनका संघर्ष और अस्मिता समाज के सामने आई है।

बीज शब्द: स्त्री विमर्श, हिंदी साहित्य, नारी चित्रण, पितृसत्ता, नारी स्वतंत्रता, नारीवादी साहित्य, सामाजिक संरचना, महिला सशक्तिकरण।

भूमिका:

हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श एक अत्यंत महत्वपूर्ण और सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से संवेदनशील मुद्दा है। साहित्य समाज का दर्पण होता है और इसमें स्त्रियों का चित्रण उस समाज की मानसिकता, सांस्कृतिक दृष्टिकोण और नैतिक मूल्यों को स्पष्ट रूप से प्रकट करता है। स्त्री विमर्श का तात्पर्य उस साहित्यिक और वैचारिक प्रवृत्ति से है, जो महिलाओं की सामाजिक स्थिति, उनके अधिकार, अस्मिता और संघर्षों को केंद्र में रखकर साहित्य रचता है। यह विमर्श केवल स्त्रियों के दुःख-दर्द को उजागर करने का कार्य नहीं करता, बल्कि उनका सम्मान, उनकी सामाजिक स्वतंत्रता और समानता की बात करता है। हिंदी साहित्य का इतिहास स्त्री चित्रण से भरा हुआ है, जो समय के साथ बदलता गया। आदिकाल से लेकर आधुनिक युग तक, स्त्रियों का चित्रण अलग-अलग दृष्टिकोणों से किया गया है। आदिकाल में स्त्रियों को देवी, प्रेरणा और सौंदर्य का प्रतीक माना गया, जबकि मध्यकाल और आधुनिक युग में उन्हें अधिक वास्तविकता और संघर्षों से जोड़ा गया है। इस दौरान, स्त्रियों को केवल अपने अस्तित्व को बनाए रखने और अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष करते हुए प्रस्तुत किया गया है।

स्त्री विमर्श ने समाज के पितृसत्तात्मक ढांचे को चुनौती दी है और स्त्रियों की दोयम दर्जे की स्थिति पर सवाल उठाया है। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श ने न केवल महिलाओं के आंतरिक संघर्षों और उनके अधिकारों को उजागर किया है, बल्कि यह समाज में समानता की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण कदम है। इसके द्वारा समाज में स्त्रियों के प्रति पक्षपाती दृष्टिकोण और भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाई गई है। इस विमर्श का उद्देश्य न केवल स्त्रियों की अस्मिता और पहचान की रक्षा करना है, बल्कि समाज में समानता और न्याय स्थापित करने के लिए एक सशक्त संवाद स्थापित करना है। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श न केवल स्त्रियों के जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझने का एक साधन है, बल्कि यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देने और समाज में समरसता और समानता को बढ़ावा देने का एक सशक्त प्रयास भी है।

स्त्री विमर्श का परिचय:

स्त्री विमर्श की शुरुआत समाज में महिलाओं की स्थिति और उनके अधिकारों को समझने तथा सुधारने की आवश्यकता से हुई। इसकी शुरुआत पश्चिमी समाज में 18वीं और 19वीं शताब्दी में हुई, लेकिन भारतीय संदर्भ में यह विमर्श 20वीं शताब्दी के मध्य में अधिक प्रखर हुआ। विमर्श की शुरुआत से पहले, समाज में महिलाओं को आमतौर पर उपेक्षित

किया जाता था और उनके अधिकारों को सीमित किया जाता था। शिक्षा, कामकाजी अवसर, और राजनीति में उनकी भागीदारी बहुत कम थी। स्त्री विमर्श ने इन सभी मुद्दों पर विचार किया और यह देखा कि कैसे समाज में पुरुषप्रधान सोच ने महिलाओं की स्थिति को प्रभावित किया है। पश्चिमी स्त्री विमर्श की शुरुआत 19वीं शताब्दी के अंत में हुई, जब महिलाओं ने अपने मताधिकार, शिक्षा, और समानता की मांग उठाई। इसके मुख्य सिद्धांतकारों में मैरी वॉलस्टोनक्राफ्ट का नाम प्रमुख है, जिनकी पुस्तक "A Vindication of the Rights of Woman" (1792) ने महिलाओं के समान अधिकारों की पैरवी की।

भारत में स्त्री विमर्श की शुरुआत 19वीं शताब्दी के अंत और 20वीं शताबदी के शुरुआत में हुई। रवींद्रनाथ ठाकुर, राजाराम मोहन रॉय जैसे सुधारक और लेखकों ने स्त्री शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह और बाल विवाह जैसे मुद्दों पर ध्यान आकर्षित किया। 20वीं शताब्दी में, भारतीय स्त्री विमर्श में और भी विस्तार हुआ, खासकर जब भारतीय महिलाएँ स्वतंत्रता संग्राम में भागी थीं, जैसे कि सरोजिनी नायडू, कमला देवी, और कस्तूरबा गांधी जैसी प्रमुख हस्तियों के योगदान से।

स्त्री विमर्श अब केवल महिलाओं के अधिकारों के लिए ही नहीं, बल्कि समाज में उनके स्थान, सशक्तिकरण और समग्र सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक बदलाव के लिए भी एक महत्वपूर्ण आंदोलन बन चुका है। यह विमर्श महिलाओं के शोषण, उत्पीड़न, और उनके खिलाफ हिंसा को चुनौती देता है और समाज में पुरुष प्रधानता को भी आलोचना करता है।

इसमें मुख्य रूप से मुद्दे:

- समानता: पुरुषों और महिलाओं के बीच समान अधिकारों की स्थापना।
- शिक्षा: महिलाओं के लिए शिक्षा के अवसरों का समान रूप से विस्तार।
- आर्थिक स्वतंत्रता: महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र और आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में कदम।
- शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य: महिलाओं के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की देखभाल।
- राजनीतिक अधिकार: महिलाओं को राजनीति और समाज के निर्णय लेने में बराबरी का अधिकार।

स्त्री विमर्श न केवल महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए है, बल्कि यह समाज को समग्र रूप से समानता, स्वतंत्रता और न्याय की दिशा में ले जाने के लिए भी काम करता है।

हिंदी साहित्य में महिलाओं का चित्रण

आदिकाल:

आदिकाल को वीरगाथा काल के रूप में जाना जाता है। इस युग का साहित्य मुख्यतः युद्ध और वीरता पर केंद्रित था। स्त्रियों का चित्रण मुख्यतः प्रेरक पात्रों के रूप में हुआ, जो वीरों को युद्ध के लिए प्रेरित करती थीं। उदा. स्वरूप अल्हा-खंड और पृथ्वीराज रासो में स्त्रियाँ वीर पत्नियों और प्रेमिकाओं के रूप में चित्रित हुईं। अक्का महादेवी और अंडाल जैसी भक्ति कवयित्रियाँ भी स्त्री अस्मिता के स्वर को अभिव्यक्त करती हैं। बारीकी से देखा जाए तो अंडाल का मानना था की "स्त्री केवल पुरुषों के वासनपूर्ति का साधन नहीं हैं।"[1]

विशेषताएँ

- स्त्री का चित्रण सहायक पात्र के रूप में।
- वीरता को प्रेरित करने वाली स्त्रियाँ।
- प्रेम और बलिदान का आदर्श रूप।

भक्ति काल:

भक्ति काल में स्त्रियों का चित्रण आध्यात्मिकता और भक्ति के संदर्भ में हुआ। स्त्रियाँ ईश्वर प्रेम में लीन होकर समाजिक बंधनों को तोड़ती हुई दिखाई दीं।

उदा. मीरा बाई: उनकी रचनाओं में कृष्ण भक्ति के माध्यम से स्त्री की आत्मा और उसकी पीड़ा का चित्रण मिलता है। उन्होंने सामाजिक परंपराओं को तोड़ते हुए भक्ति को प्राथमिकता दी।

विशेषताएँ:

- नारी की आत्मा और उसकी भक्ति का चित्रण।
- सामाजिक बंधनों को चुनौती।
- ईश्वर प्रेम में स्त्री की मुक्ति की तलाश।

रीतिकाल:

रीतिकाल में हिंदी कविता का केंद्र बिंदु शृंगार और सौंदर्य बन गया। नायिका भोग्या और उपभोग की वस्तु के रूप में प्रस्तुत की गई। कवियों ने नारी देह के सौंदर्य का अत्यधिक वर्णन किया।

उदा. बिहारी की सतसई में नायिका के शृंगार का सुंदर वर्णन मिलता है।

केशवदास की रसिकप्रिया और काव्यप्रकाश में नायिका भेद और प्रेम शृंगार को विस्तार से बताया गया।

विशेषताएँ:

नारी देह का सौंदर्यवादी चित्रण।

प्रेम और वासना के मिश्रित भाव।

स्त्री को भोग्या के रूप में प्रस्तुत किया गया।

आधुनिक हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श

आधुनिक युग में स्त्री विमर्श को साहित्य में व्यापक स्थान मिला। इस युग में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति, उनके अधिकार, अस्मिता और संघर्ष को वास्तविकता के धरातल पर प्रस्तुत किया गया।

प्रेमचंद युग और यथार्थवाद

प्रेमचंद ने हिंदी साहित्य में यथार्थवाद की नींव रखी और स्त्री पात्रों को सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं से जोड़कर प्रस्तुत किया।

उदा. गोदान की धनिया एक मजबूत और सशक्त महिला है, जो परिवार की रीढ़ बनकर उभरती है। धनिया नारी सशक्तिकरण का प्रतीक है। 'निर्मला' में बाल विवाह, दहेज प्रथा और स्त्री की दयनीय स्थिति को मार्मिक रूप से चित्रित किया गया है।

विशेषताएँ:

- स्त्रियों का यथार्थवादी चित्रण।
- सामाजिक कुरीतियों पर आलोचना।
- नारी अस्मिता और संघर्ष का उद्घाटन।

स्वतंत्रता संग्राम और स्त्री विमर्श

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिलाओं ने न केवल सामाजिक आंदोलनों में भाग लिया, बल्कि साहित्य में भी अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई।

महादेवी वर्मा की श्रृंखला की कड़ियाँ में स्त्रियों की भावनाओं, उनकी पीड़ा और अस्मिता का चित्रण मिलता है। सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता झाँसी की रानी में वीरांगना का आदर्श प्रस्तुत किया गया है।

विशेषताएँ:

- स्वतंत्रता और स्वाभिमान की भावना।
- नारी के संघर्ष और बलिदान का चित्रण।
- पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष की झलक।

नई कहानी और स्त्री विमर्श:

1950 के दशक में "नई कहानी" आंदोलन ने साहित्य में यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया। इसमें स्त्री के भावनात्मक, मानसिक और सामाजिक संघर्षों को प्रमुखता मिली।उदा. मन्नू भंडारी की यही सच है में स्त्री स्वतंत्रता और आत्मसम्मान की कहानी है। कमलेश्वर और राजेंद्र यादव की कहानियों में भी स्त्री पात्रों की जटिलताओं को उभारा गया।

विशेषताएँ:

- नारी की आत्मसत्ता का चित्रण।
- स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलता।
- नारी की यौनिकता और भावनाओं की अभिव्यक्ति।

नारीवादी आंदोलन और हिंदी साहित्य

नारीवादी आंदोलनों का हिंदी साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा। नारीवाद के तीन प्रमुख तरंगों (waves) ने स्त्री विमर्श को गहराई प्रदान की।

1. पश्चिमी नारीवाद और हिंदी साहित्य

पश्चिमी नारीवाद ने स्त्री अधिकारों, शिक्षा और स्वतंत्रता के मुद्दों को उठाया। इसने हिंदी साहित्य में भी नारीवादी दृष्टिकोण को प्रेरित किया।सिमोन द बोउवार की कृति 'द सेकंड सेक्स' का प्रभाव भारतीय लेखिकाओं पर पड़ा।

महादेवी वर्मा और मन्नू भंडारी जैसी लेखिकाओं ने स्त्री अस्मिता और स्वतंत्रता की बात की।

2. भारतीय नारीवाद और हिंदी साहित्य

भारतीय नारीवाद ने स्त्री विमर्श को सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भों में देखा।

कृष्णा सोबती की जिंदगीनामा में स्त्रियों की पारिवारिक और सामाजिक भूमिकाओं का गहन चित्रण है। उन्होंने इस उपन्यास में स्त्री पात्रों की जटिलताओं को उभारा दिया है। कमला भसीन और सुधा अरोड़ा जैसी लेखिकाओं ने भारतीय स्त्रियों की समस्याओं को स्वर दिया। महादेवीजी नारीत्व को अभिशाप मानती हैं। उन्होंने अभिशाप पर लिखा है – "अग्नि में बैठकर अपने आपको पतिप्राणा प्रमाणित करनेवाली स्फटिक सी स्वच्छ सीट में नारी के अनंत युगों वेदना साकार हो गई हैं।"[2]

3. दलित और आदिवासी स्त्री विमर्श

दलित और आदिवासी स्त्रियों के संघर्षों को हिंदी साहित्य में प्रमुखता से स्थान मिला। उषा दूबे और अनिता भारती जैसी लेखिकाओं ने दलित स्त्रियों की दुर्दशा पर लेखन किया। आदिवासी स्त्री विमर्श में स्त्रियों की दोहरी शोषण की स्थिति को उजागर किया गया — एक तो लिंग आधारित शोषण और दूसरा जातिगत अन्याय।

हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श की समस्याएँ और सीमाएँ

- पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण

अभी भी हिंदी साहित्य में पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण की झलक मिलती है। स्त्रियों को अक्सर सहायक या द्वितीयक पात्रों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

- यौनिकता का बाजारीकरण

कई बार स्त्री यौनिकता को साहित्य में बाजारीकृत दृष्टिकोण से चित्रित किया गया है, जिससे उनकी भावनाओं और अस्तित्व को गौण कर दिया जाता है। मृदुला गर्ग जी ने चित्तकोबरा उपन्यास में स्त्री यौनिकता और स्वतंत्रता का गहन चित्रण किया महादेवी वर्मा ने भी उनके विचार स्पष्ट किया है "अनियंत्रित वासना का प्रदर्शन स्त्री के प्रति क्रूर व्यंग्य ही नहीं जीवन के प्रति विश्वासघात भी हैं।"[3]

- वर्ग और जाति का विमर्श

हिंदी साहित्य में मुख्य रूप से उच्च वर्गीय स्त्रियों के संघर्षों को केंद्र में रखा गया, जबकि दलित और आदिवासी स्त्रियों की वास्तविक समस्याओं को लंबे समय तक अनदेखा किया गया। प्रभा खेतान का विचार है कि स्त्री के संघर्ष को वर्ग संघर्ष मानने की जो मान्यता रहीं है वह भारतीय संदर्भ में असफल है। उनके अनुसार "यह भी सच हैं की वर्गीय संघर्ष के नाम पर स्त्री के मुद्दों की उपेक्षा ही की गई है। स्त्री भी जुलूस मैं शामिल हुई और थागई गई।"[4]

स्त्री विमर्श की सकारात्मक उपलब्धियाँ:

- नारी अस्मिता और आत्मविश्वास का उत्थान।
- सामाजिक कुरीतियों पर प्रभावी प्रहार।
- स्त्रियों की शिक्षा और आत्मनिर्भरता के मुद्दों को प्रमुखता देना।
- दलित और आदिवासी स्त्रियों के संघर्षों को मुख्यधारा में लाना।
- स्त्री-पुरुष समानता की अवधारणा को बल देना।

निष्कर्ष:

हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श ने महिलाओं की स्थिति, उनके संघर्ष, अस्मिता, और समाज में उनके स्थान को एक नए दृष्टिकोण से उजागर किया है। इस विमर्श ने न केवल नारी स्वतंत्रता की आवश्यकता को समझाया, बल्कि यह समाज को यह सोचने पर भी मजबूर किया कि नारी भी एक स्वतंत्र और सम्मानित अस्तित्व रखती है। यह विमर्श अब केवल पितृसत्ता के विरोध तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें स्त्रियों की आत्मचेतना, आत्मनिर्भरता, यौनिकता और वर्ग संघर्ष जैसे गहरे और विविध मुद्दों की चर्चा होती है।

स्त्री विमर्श ने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया और उसमें महिलाओं की आवाज़ को अभिव्यक्ति दी। इसने साहित्य को केवल सामाजिक या साहित्यिक विमर्श से ऊपर उठाकर एक सामाजिक क्रांति का माध्यम बना दिया, जिसके माध्यम से समाज में समानता, न्याय और अधिकारों की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। आज स्त्री विमर्श का दायरा और भी विस्तृत हो गया है, और यह न केवल महिलाओं के अधिकारों और आत्मसम्मान की बात करता है, बल्कि समाज में महिलाओं के लिए एक सम्मानजनक स्थान सुनिश्चित करने की दिशा में भी काम करता है।

संदर्भ ग्रंथ:

1. डॉ. के. एम. मालती, नारी विमर्श भारतीय परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, पृष्ठ क्र.15
2. वर्मा महादेवी, श्रृंखला की कड़ियाँ, तृतीय सं., लोकभारती- 2001, पृष्ठ क्र. 36
3. डॉ. जैन निर्मला, (संपा.) महादेवी साहित्य समग्र, भाग 3, पृष्ठ क्र.227
4. सं. जगदीश चतुर्वेदी, सुधा सिंह, प्रभा खेतान, स्त्री विमर्श के अंतर्विरोधी, स्त्री अस्मिता, साहित्य और विचार धारा, आनंद प्रकाशन, कोलकाता 2004 पृष्ठ क्र. 360